International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157; Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 2; Issue 3; May 2017; Page No. 126-128

महाकवि सूरदास की अप्रतिम रचनाः सूरसागर (विशेष सन्दर्भ-भ्रमरगीत)

डॉ0 योगेश राव

6/666, विकास नगर, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

'सूरसागर' सूरदास की सर्वप्रमुख रचना है। उसमें सूर द्वारा गाये गये कृष्ण के लीला-पदों का संकलन, सूर की मृत्यु के उपरान्त उनके शिष्यों ने किया। प्रारम्भ में इन पदों की संख्या सवा लाख के लगभग बतायी जाती थी, परन्तु आज प्राप्त होने वाले 'सूरसागर' में इतने पद नहीं। अब कुल 4132 पद ही प्राप्त होते हैं। 'सूरसागर' की रचना श्रीमद्भागवत के अनुकरण पर हुई है। इसमें कुल 12 स्कन्ध हैं। आकार की दृष्टि से प्रत्येक स्कन्ध असमानताओं से युक्त है।

'सूरसागर' के कारण ही आज सूरदास की गणना हिन्दी के अंग्रेजी कवियों में की जाती है। 'सूरसागर' में कृष्ण की बाल्यकाल से लेकर उनकी युवावस्था तक की ललित लीलाओं का मनोहारी वर्णन मिलता है। भागवत का आधार लेते हुए भी सूरसागर की रचना एक स्वतन्त्र ग्रन्थ के रूप में हुई है। मुक्तक शैली की रचना होते हुए भी, इसकी प्रबन्धात्मक प्रवृत्ति अत्यंत सराहनीय है। कवि कृष्ण-चरित के सुखद प्रसंगों का संयोजन करता तथा गैरमहत्वपूर्ण प्रसंगों को छोड़ता चलता है। इस तरह कथा में एकतानता न होते हुए भी, अपने आप में सर्वथा स्वतंत्र पदों से पग-पग पर श्रीमद्भागवत की परम्परा प्रसिद्ध कथा का आभास मिलता रहता है।

'दशम स्कन्ध' सूरसागर का प्राणस्वरूप है। यह आकर का दृष्टि से भी बहुत बड़ा है। इसमें कुल 3632 पद हैं। सूरसागर की सारी गरिमा, इसकी समस्त काव्यात्मकता इस एक ही 'स्कन्ध' में सिमटकर आ गयी है। संक्षेप में, सारा का सारा सूरसागर राधाकृष्ण या फिर गोपी कृष्ण की मादक लीलाओं से ओतप्रोत है। स्वरूप की दृष्टि से यह एक 'गीतकाव्य' है। गीतिकाव्य की सभी विशेषताएँ-रागात्मकता, संगीतात्मकता तथा स्वच्छन्दता आदि इसमें विद्यमान है। इसके सभी पदो के अपने आप में स्वतंत्र होते हुए भी इसमें विद्यमान कथासूत्र की प्रबन्धात्मकता सर्वथा सराहनीय है। यही कारण है कि यह महाकाव्य न होते हुए भी साहित्य में महाकाव्यों के समानान्तर स्थान का अधिकारी बन सका है।

सूरसागर का काव्य-सौन्दर्य-यदि तुलसीकृत 'रामचरित-मानस' अवधी की महानतम रचना है तो 'सूरसागर' ब्रजभाषा का। एक में मर्यादा-पुरूषोत्तम राम का चरित अपने विकास की चरम सीमा छूता हुआ दिखाई देता है, तो दूसरे में लीला-विहारी कृष्ण का चरित। इसीलिए तो एक का कवि 'सूर्य' है तो दूसरे का कवि 'शशि' कहलाता है।

'सूरसागर की रचना' 'श्रीमद्भागवत पुराण' की कथा का आधार लेकर की गयी है। परन्तु पारम्परिक वैष्णवी भक्ति के इस महान् ग्रन्थ का अनुसरण करते हुए भी सूरसागर में कवि की अनेक नवीन उद्भावनाएँ और मौलिकता की दृष्टि से सूरसागर के चार प्रसंग विशेष उल्लेखनीय हैं-

(1) बालक कृष्ण का मनोवैज्ञानिक धरातल पर किया गया वर्णन।
(2) श्रृंगार-वर्णन प्रसंग में नख-शिख-चित्रण तथा ऋतु-वर्णन।
(3) कृष्ण और राधा का रतिभाव चित्रण।
(4) वियोग-श्रृंगार के अन्तर्गत भ्रमरगीत प्रसंग।

ये चार स्थल ऐसे हैं, जहाँ सूर ने अपने मौलिक कवित्व का प्रदर्शन खूब खुल कर किया है।

बाल-वर्णन की दृष्टि से सूर हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। इनके द्वारा किया गया बालकृष्ण की बाल्यावस्था का वर्णन अत्यन्त कलात्मक और मनोवैज्ञानिक है। तुलसी ने भी राम का बाल-वर्णन किया है, पर उनका वर्णन उतना सहज, स्वाभाविक और कलात्मक नहीं हो सका है, जितना सूर का। सूर का बाल-वर्णन एक सहज लोकभावना से पूर्ण है। तुलसी के राम की भाँति सूर के कृष्ण राजकुमार न होकर एक साधारण गोप-बालक मात्र हैं। नन्द और यशोदा के आँगन में किलकते हुए कृष्ण की एक-एक छवि का मार्मिक अंकन सूर ने किया है।

'सूरसागर' का दूसरा कवित्वपूर्ण स्थल गोपियों के संयोग और वियोग श्रृंगार का वर्णन है। इसी प्रसंग में कवि ने पारस्परिक नख-शिख वर्णन और ऋतुवर्णन भी प्रस्तुत किया है। संयोग-चित्रों से सूर के वियोगचित्र कहीं विशिष्ट हैं। वियोग की अवस्था में सूर ने गोपियों की मनोवृत्ति का चित्रण वास्तविक धरातल पर किया है। ब्रज की गोपियों के दुःख में प्रकृति भी बदलती हुई दिखायी पड़ती है। यमुना किनारे के हरे-भरे वृक्ष-वृन्दावन की सुन्दर लताओं के झुरमुट जो कभी कृष्ण के रहने पर गोपियों को सुख देते थे, कृष्ण के मथुरा चले जाने पर, वही सब दुःख देनेवाले हो गये हैं- क्योंकि वे कृष्ण के साथ की गयी केलियों की याद दिलाने वाले हैं। संक्षेप में संयोग और वियोग में मानवीय भावनाओं के अनुरूप बदलते हुए प्राकृतिक दृश्यों और उनके प्रभाव का अभूतपूर्व अंकन सूर की अपनी विशिष्ट मौलिकता है। सूर का वियोग वर्णन भी उनके बाल-वर्णन की भाँति हिन्दी साहित्य में विशिष्ट रखता है।

सूर के मौलिक कवित्वप्रदर्शन का तीसरा स्थल राधा और कृष्ण के रतिभाव का चित्रण है। जयदेवकृत 'गीत-गोविन्दम्' की राधा की भाँति सूर की राधा भी कृष्ण के प्रेम में उन्मत्त गोपबाला हैं। कृष्ण-चरित के अन्तर्गत राधा की कल्पना श्रीमद्भागवत् के बाद की है। 'सूरसागर' में 'राधा' का व्यक्तित्व पूर्णतया विकसित रूप में मिलता है। कृष्ण बाल्यावस्था से ही राधा की रूपमाधुरी पर आसक्त हैं। 'सूर-सागर' में अनेक कवित्वपूर्ण प्रसंगों की उद्भावना कर कवि ने राधा और कृष्ण के अटूट प्रेम को अभिव्यक्ति प्रदान की है। केवल राधा ही नहीं, ब्रज की सभी गोपियाँ कृष्ण की दिवानी हैं। कृष्ण सूरसागर में एक धीर ललित नायक और अद्भुत व्यक्तित्वधारी बली पुरूष के रूप में वर्णित हैं। राधा उनकी परकीया हैं। उनके परकीया होने के कारण ही राधा और कृष्ण के गुप्त रति-भाव-चित्रण में अतीत विशदता और कलात्मकता का समावेश हो गया है।

'सूरसागर' का चौथा कवित्वपूर्ण स्थल वियोग-वर्णन के ही प्रसंग में 'भ्रमरगीत' प्रसंग की अवधारणा है। कृष्ण के मथुरा चले जाने पर उनके प्रति ब्रजबालाओं के अटूट प्रेम को प्रदर्शित करने के लिये ही कवि ने इस प्रसंग की

उद्धावना की है। भ्रमरगीत की कथावस्तु शुद्ध भावात्मक है। इसमें आधारभूत मात्र दो घटनाओं का वर्णन है-(1) उद्धव का ब्रज आगमन तथा (2) उद्धव का ब्रज से मथुरा लौटना। इस प्रसंग में पात्र भी मुख्यतः चार हैं- कृष्ण, उद्धव, कुब्जा तथा गोपियाँ। कथावस्तु का सूत्र इस प्रकार विकसित हुआ है-

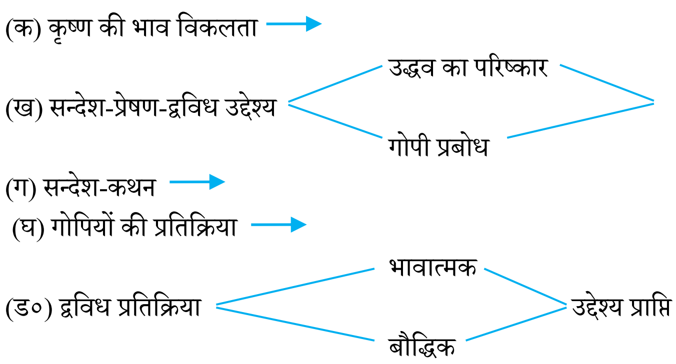

भ्रमरगीत का आरम्भ कृष्णा की भाव-विकलता से तथा उसका चरम बिंदु उद्धव के हृदयपरिवर्तन में हैं। कथा का विकास अत्यंत क्रमबद्ध तथा सुव्यवस्थित ढंग से होता है इसमें यदि एक ओर मानव मनोविज्ञान को अपनाकर मनः स्थितियों का स्वाभाविक अंकन है तो दूसरी ओर बौद्धिक तर्कों का भी पूरा उपयोग है। मथुरा से कृष्ण के ब्रह्मज्ञानी मित्र उद्धव ब्रज में गोपियों को प्रबोध देने आते हैं। वे उन्हें बताते हैं कि कृष्ण तो सर्वव्यापी हैं, उनके वियोग में संत्रस्त होना भूलो वे तो तुम सब (गोपियों) के अन्तस् में नित्य विद्यमान रहते हैं। भोली-भाली गोपियों को उद्धव की ज्ञानभरी बातें बहुत ही कड़वी लगीं, पर कृष्ण के मित्र होने के नाते वे उद्धव से कुछ कहने में संकोच कर रही थीं। तभी एक काला भ्रमर उड़ता हुआ उधर आ गया-

"इहि अन्तर मधुकर इक आयौ।
निज स्वाभाव अनुसार निकट ह्वै, सुन्दर शब्द सुनायौ॥
पूछन लागी ताहि गोपिका, कुबिजा तोहि पठायौ।
किधौ सूर स्याम सुन्दर कौ, हमैं संदेशौ लायौ॥"[1]

श्रीकृष्ण के विरह में व्यथित गोपियों को उद्धव का उपदेश जले पर नमक का कार्य कर रहा था किन्तु प्रियतम के मित्र तथा आये अतिथि का वे उत्तर देकर वे अनादर तो नहीं कर सकती थी। इसलिए उन्होंने उद्धव को उत्तर देने के लिए माध्यम के रूप में भ्रमर को ग्रहण कर लेना उचित समझा। भ्रमर को लक्ष्य करके गोपियों ने उद्धव के सामने अपने मन की सारी भड़ास निकल दी।

कृष्ण द्वारा प्रेषित ज्ञानाभिमानी उद्धव ब्रज में जाकर गोपियों को निराकार निर्गुण ब्रह्म की आराधना का उपदेश देते हैं तो इनकी रुखी बातें सुनकर क्षुब्ध होकर वे मधुकर के बहाने फटकारती हैं-

"काहे कौ रोकत मारग सूधो ?
सुनहु मधुप ! निरगुन कंटक तै, राज-पथ क्यौं रुधौं ?"[2]

यही नही, वे उद्धव के ज्ञान और योग की खिल्ली भी खूब उड़ाती हैं। यथा-

"आयौ घोष बड़ो ब्यौपारी।
लादि खेप गुन, ग्यान जोग कौ, ब्रज में आनि उतारी॥"[3]

वे तिलमिला उठती हैं तथा अत्यंत मुखर होकर अपनी मर्म व्यथा को व्यंग, कटाक्ष आदि के द्वारा व्यक्त करने लगती हैं-

"उधौ मन न भये दस-बीस।
एक हुतौ सो गयौ स्याम संग, को अवराधै ईस॥"[4]

यह भ्रमरगीत विविध भावों के उद्देलन से परिपूर्ण है। गोपियों का हृदय विरह से जल रहा है न। उद्धव के उपदेश से उनकी ज्वाला और भड़क रही है-

"अंखियाँ हरि-दरसन की भूखी।
कैसे रहैं रूप-रस-राँची ये बतिया सुनि रुखी॥
अवधि गनत, इकटक मग जोवत, तब एती नहि झूखी।
अब इन जोग-संदेसनि उधौ, अति अकुलानी दूखी॥"[5]

कृष्ण के मिलन-काल में अतीव शीतलता एवं सुख प्रदान करने वाली लताएँ अब विरह अवस्था में खाने को दौड़ रही हैं-

"बिनु गोपाल बैरिनी भई कुंजै।
तब वै लता लगति अति शीतल, अब भई अब विषम ज्वाल की पुंजै॥"[6]

तथा-

"पिय बिन नागिनी कारी रात।
जौ कहुँ जामिनि उबति जुन्हैया, डसि उलटी ह्वै जात॥
जंत्र न फुरत, मंत्र नहिं लागत, प्रीति सिरानी जात।
'सूर' स्याम बिन बिकल बिरहिनी मुरि-मुरि लहरैं खात॥"[7]

वे तर्क दे-देकर उद्धव के ज्ञान-मार्ग पर अपने प्रेममार्ग का प्रभुत्व स्थापित करने में सफल होती हैं। उद्धव का कठोर ज्ञान गोपियों की प्रेम की आँच में पिघल उठता है। इस स्थल पर सूर गोपियों के माध्यम से ज्ञान पर पे्रम की जय का घोष कराते हैं। इस प्रकार भ्रमरगीत का मूल प्रयोजन ज्ञान तथा योग की पराजय तथा प्रेम एवं भक्ति की विजय घोषित करना है। इसी आधार पर आचार्य शुक्ल ने ठीक ही कहा है- "वियोग की जितनी अंतर्दशाए हो सकती हैं, जितने ढंग से उन दशाओं का साहित्य में वर्णन हुआ है और सामान्यतः हो सकता है, वे सब उसके भीतर मौजूद है।"[8]

कवित्व की दृष्टिका से सूरसागर का यह प्रसंग सर्वोत्कृष्ट होने के साथ ही सर्वथा अछूता भी है। यह प्रसंग सूरसागर की काव्यगरिमा के मस्तक पर सुशोभित मुकुट-सा है। भ्रमरगीत के विषय में आचार्य रामचंद्र शुक्ल अपने ग्रन्थ 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में लिखते हैं- "सूरसागर का सबसे मर्मस्पर्शी और वाग्वैदग्धपूर्ण अंश 'भ्रमरगीत' है जिसमें गोपियों की वचनवक्रता अत्यंत मनोहारिणी है। ऐसा सुन्दर उपालंभ काव्य और कही नहीं मिलता।"[9]

इन कुछ मौलिक अथच मार्मिक प्रसंगों की उद्धावना के अतिरिक्त 'सूरसागर' पग-पग पर उच्चकोटि की काव्यात्मकता से युक्त है। इसका सबसे बड़ा काव्यगत चमत्कार तो यही है कि मुक्तक प्रकृति की रचना होते हुए भी इसके पदों में एक हल्का कथा प्रसंग भी भासित होता रहता है। इसके पद भाषा, भाव, अलंकार-प्रयोग की दृष्टि से तो यह काव्य अद्भुत है। इतनी सुन्दर, सरल एवं काव्यमयी ब्रजभाषा अन्य किसी कवि की रचना में नहीं मिलती। 'सूरसागर' के कवि को कुछ भी सायास नहीं करना पड़ा है, सारे वर्णन और भाव अत्यन्त सहज एवं स्वाभाविक रूप में प्रकट होते देखे जाते हैं। सूरदास ने सम्पूर्ण

भ्रमरगीत प्रसंग को एक अत्यंत अनूठे विरह-काव्य का रूप दिया है, जिसमे आदि से अंत तक ब्रज की दुःख कथा कही गयी है। भ्रमरगीत के पदों में सूरदास का भावुक हृदय गोपियों की उक्तियों के माध्यम से उड़ेल दिया है। उनके हृदय की एक-एक धड़कन और एक-एक कम्पन इन पदों में स्पष्ट रूप से सुनाई पड़ती है। सूरसागर में सूर की काव्य- कला अपने चरमोत्कर्ष पर जा पहुँची है- सच्चा प्रेमी प्रिय का विरह असहय होने पर भी, स्वयं दुःख झेलकर प्रिय को सुखी देखना चाहता है। यही स्थिति सूर की गोपियों की है। वे कृष्ण के लिए दिन-रात छटपटा रही हैं, फिर भी उन्हें बिषम परिस्थिति में डालना नहीं चाहती-

> "ऊधौ ! तुम इतनी जाइ कहौ।
> सबै बिरहिनी पाइ लगति हैं, मथुरा कान्ह रहौ॥"[10]

अलंकरण, भाव-चित्रण तथा वस्तु-व्यंजना के लिए सूर ने कहीं-कहीं अद्भुत और अनूठी कल्पनाएँ की हैं। उनकी ऐसी अनेक काल्पनिक योजनाएँ हैं, जो सहृदय पर अपना प्रभाव डालती हैं। यथा-

> "मोहन माग्यौं अपनौ रूप।
> या ब्रज बसत अंचै तुम बैठी, ता बिनु तहाँ निरुप॥"[11]

सूरसागर के अति उल्लिखित कलापक्ष की चर्चा करते हुए डा*0* हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं- 'सूरदास जब अपने विषय का वर्णन शुरू करते हैं तो मानों अलंकारशास्त्र हाथ जोड़कर उनके पीछे-पीछे दौड़ा करता है। उपमाओं की बाढ़ आ जाती है, रूपकों की वर्षा होने लगती है। संगीत के प्रवाह में स्वयं कवि बह जाता है। वह अपने आपको भूल जाता है। काव्य में इस तन्मयता के साथ शास्त्रीय-पद्धति का निर्वाह विरल है। पद-पद पर मिलने वाले अलंकारों को देखकर भी कोई अनुमान नहीं कर सकता कि कवि जानबूझकर अलंकारों का उपयोग कर रहा है। पन्ने पर पन्ने पढ़ते जाइये, केवल उपमाओं और रूपकों की छटा, अन्योक्तियों का ठाट, लक्षण और व्यंजना का चमत्कार; यहाँ तक कि एक ही चीज दो-दो, चार-चार, दस-दस बार दुहरायी जा रही है, फिर भी स्वाभाविक और सहज प्रवाह कहीं भी आहत नहीं हुआ।

सूरदास की कविता के सन्दर्भ में मार्क्सवादी समीक्षक शिवकुमार मिश्र का कथन है-"सूरदास की कविता के बारे में एक दोहा प्रचलित है, जिसमे उसकी बेधक क्षमता का कथन किया गया है:

> किधौं सूर को सर लग्यो, किधौं सूर की पीर।
> किधौं सूर को पद लग्यो, बेध्यो सकल सरीर।

कहते हैं यह दोहा...सूर की कविता की अद्वितीय प्रभाव क्षमता, उसके अमिट प्रभाव की बड़ी सटीक व्यंजना करता है। सूर कालजयी कवि है, और विरले कवि ही कालजयी हो पाते है। सूर की कविता में जो हृदय बेधक क्षमता है, एक लम्बी कालावधि के बाद, वह आज भी उतनी ही असरदार बनी हुई है और उसे कालजयी बनाए हुए है।"[12]

अस्तु ! 'सूरसागर' सभी दृष्टियों से एक अनूठा काव्यग्रन्थ है। यह हिन्दी गीतिकाव्य-परम्परा का भी सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ है। इसका प्रत्येक पद संगीत की विविध रागिनियों का आश्रय लेकर लिखा गया है। पूरे काव्य में पग-पग पर बिखरी हुई रागात्मकता तथा हृदय की मार्मिक अनुभूति गीतिकाव्य के अन्य तत्त्वों के रूप में निविष्ट है। सूर के उन्मुक्त भावोच्छवास तो सर्वथा दर्शनीय हैं। इस प्रकार 'सूरसागर' उत्कृष्ट कलात्मकता से युक्त एक श्रेष्ठ काव्य-रचना है।

सन्दर्भः

1. सूरसागर- सूरदास, सम्पादक-डॉ. सिद्धनाथ पाण्डेय, पृष्ठ-370, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2, नवीन संस्करण-2002
2. सूरसागर- सूरदास, सम्पादक-डॉ. सिद्धनाथ पाण्डेय, पृष्ठ-431, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2, नवीन संस्करण-2002
3. सूरसागर- सूरदास, सम्पादक-डॉ. सिद्धनाथ पाण्डेय, पृष्ठ-442, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2, नवीन संस्करण-2002
4. सूरसागर- सूरदास, सम्पादक-डॉ. सिद्धनाथ पाण्डेय, पृष्ठ-407, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2, नवीन संस्करण-2002
5. सूरसागर- सूरदास, सम्पादक-डॉ. सिद्धनाथ पाण्डेय, पृष्ठ-384, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2, नवीन संस्करण-2002
6. सूरसागर- सूरदास, सम्पादक-डॉ. सिद्धनाथ पाण्डेय, पृष्ठ-454, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2, नवीन संस्करण-2002
7. सूरसागर- सूरदास, सम्पादक-डॉ. सिद्धनाथ पाण्डेय, पृष्ठ-329, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2, नवीन संस्करण-2002
8. सूरसागर- सूरदास, सम्पादक-डॉ. सिद्धनाथ पाण्डेय, पृष्ठ-15, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2, नवीन संस्करण-2002
9. हिन्दी साहित्य का इतिहास- आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृष्ठ-136, प्रकाशन संस्थान, दयानंद मार्ग, दरिया गंज नई दिल्ली, संस्करण-2007
10. सूरसागर- सूरदास, सम्पादक-डॉ. सिद्धनाथ पाण्डेय, पृष्ठ-454, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2, नवीन संस्करण-2002
11. सूरसागर- सूरदास, सम्पादक-डॉ. सिद्धनाथ पाण्डेय, पृष्ठ-413, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-2, नवीन संस्करण-2002
12. भक्ति आन्दोलन और भक्ति काव्य- शिवकुमार मिश्र पृष्ठ-128, अभिव्यक्ति प्रकाशन, बी-31, गोविन्दपुरी कालोनी इलाहाबाद-211004 संस्करण-2005